International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

उषा देवी मित्रा के उपन्यास 'पिया' में स्त्री विषयक चिन्तन

अन्नु
शोधार्थी – पी.एच.डी. (हिन्दी विभाग)
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक।

स्त्री विषयक चिन्तन से अभिप्राय यह नहीं है कि स्त्री को सर्वोपरी मानना, उसे उच्च सत्ता पर आसीन करना और पुरूष को उसके पैरों के पास स्थान देना, बल्कि इसका तात्पर्य यह है कि स्त्री को भी पुरूष के समान समझना। स्त्री और पुरूष गाड़ी के दो पहियों की भांति हैं जिसमें दोनो पहियों की समान रूप आवश्यकता होती है।

उषा देवी मित्रा हिन्दी की सशक्त लेखिका हैं जिन्होंने अपने लेखन में स्त्री की बदलती हुई स्थिति, उसकी यातनाओं, संघर्षों को स्त्रीवादी परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया है। इसके लेखन में स्त्री की एक अलग ही छवि है जो आज तक हाशिये पर ही रही है, उभरकर सामने नहीं आई है। अन्होंने पितृ सत्तात्मक व्यवस्था की तमाम संकीर्णताओं को तोड़ा है जो कि संदियों से स्त्री को यौनाचरण, सामाजिक आचरण, नैतिक की पितृक मर्यादाओं भ्रातृ मर्यादओं में बुरी तरह से जकड़े हुई थी।

उषा जी ने अपने कथा याहित्य में ऐसे स्त्री पात्र की सृजना की जिससे नारी प्रेरणा प्राप्त करें व उससे प्रोत्साहित हो। उसे अपने अभिव्यक्ति के लिए पुरूष की आवश्यकता न हो, जिनमें दुर्बलताएं न होकर, उच्च चारित्रिक गुण हो। जिनकी भौतिक और शारीरिक आवश्यकताए हों। 'पिया' के माध्यम से लेखिका उन तमाम शिक्षित नारियों की आवाज को बुलन्द करने का प्रयास किया है जो अपने आस्तित्व के प्रति सजग बनी है। अपने अच्छे बुरे का निर्णय स्वयं करती है। 'नीलिमा' के माध्यम से लेखिका ने विध्वा की सामाजिक व पारिवारिक संस्कारों व मानसिंकताओं के दोहरे अपमान को झेलती स्त्री की दुदर्शा को दर्शाया है।

उषा जी ने अपने उपन्यास 'पिया' में नीलिमा के माध्यम से बाल विवाह की समस्या को उठाया है। बाल विवाह समाज पर कलंक के रूप में विराजमान है।

उषा जी बाल विवाह जैसी सामाजिक कुरीति के दुष्परिणामों को समाज, के सामने प्रस्तुत करना चाहती थी और एक वैचारिक दृष्टिकोण समाज के सामने प्रस्तुत करना चाहती थी। पिया का विवाह 7 वर्ष की आयु में हो चुका था। नीलिमा का विवाह भी उसके पिता ने बचपन में कर दिया था। 'भैया ने तेरी शादी तय कर दी थी, जब तू सात वर्ष की थी।' नीलिमा के माता–पिता ने भी गौरी पुण्य कमाने के स्वार्थवश व माता के कहने पर उसका बाल विवाह कर दिया। ''मातृभक्त पिता, माता के संतोष के लिए गौरीदान का पुण्य संचय कर बैठे, अष्ट वर्षीय नीलिमा का विवाह करके''। विवाह की बात नीतिमा को सपने के समान लगती थी और साथ ही विवाह के सपने की स्मृति के साथ ही उसे उस दिन का स्मरण भी होता है जब उसके पति की मृत्यु के समाचार को सुनकर उसकी मां ने सारी श्रंगारिक सामग्री को जल में विसर्जित कर दिया था। ''एक दीर्घ अभिशाप, आकुल क्रन्दन की तरह उस दिन की बात, जिस दिन हृदय से लगाकर माता ने विवश हो आंसू की झड़ी लगा दी थी और मांग का सिन्दूर नदी में बहाकर कांच की चूड़ियां उतार ली थी।''

उषा जी ने 'निलिमा' के माध्यम से विध्वा जीवन का सजीव चित्र प्रस्तुत किया। हमारे समाज में स्त्री का जीवन ही हेय समझा जाता है। समाज में जीना उसके लिए दुर्वह हो जाता है। ''स्त्री पुरूष के वैभव की प्रदर्शनी समझी जाती है और जिस प्रकार बालक के न रहने पर जैसे उसके खिलौने निर्दिष्ट स्थानों से उठाकर फेंक दिए जाते हैं, उसी प्रकार एक पुरूष के न रहने पर न स्त्री के जीवन का कोई उपयोग रह जाता है न समाज या ग्रह में उसको निश्चित स्थान ही मिल पाता है।''

लेखिका उषा देवी मित्रा प्रेमचन्द के समकालीन थी। तत्कालीन समाज में विध्वाओं के प्रति दुर्व्यवहार का सजीव चित्र हमारे सामने उषा जी ने प्रस्तुत किया। हालांकि नवजागरणकालीन वातावरण में सुधार की लहर में गर्माहट अवश्य हुई, परन्तु वर्षों से चली आ रही, परम्पराओं और धार्मिक रूढ़ियों ने इस गर्माहट की उष्मा को यथावत न रहने दी। समाज में विध्वा औरत के प्रति अनेक प्रकार की भ्रातियां फैली हुई हैं। जैसे पति की मृत्यु के बाद किए जाने वाले कर्मकांडों

की दुसाध्य तकलीफों से उस विध्वा स्त्री के प्राण निकल जाए तो समाज में प्रचलित किया जाता है कि वह सच्ची सती और पतिव्रता नारी थी। समाज में यह प्रचारित किया जाता है कि विध्वा औरत का स्वास्थ्य सदैव अच्छा होता है। 'विध्वा से रोग, पीड़ा दूर रहती है।'

विध्वा को अपने जीवन में मिलने वाली उपेक्षा और तिरस्कार की मात्रा इतनी बढ़ जाती है कि समाज में उसका जीना दूभर हो जाता है और वह आत्महत्या की ओर अग्रसर होती है। नीलिमा और सुकान्त के संबंध हैं, सामाजिक प्रतिष्ठा के भय से वह उसके साथ शादी नहीं करता है, गर्भ गिराने को कहता है, जिससे विवश नीलिमा आत्महत्या कर लेती है। उसका ''कमरे के बीच में उसक निर्वस्त्र शरीर पड़ा हुआ था, सिर के बाल बिखरे, आंखे फटी थी, सुराही का एक बड़ा सा टुकड़ा उसके स्पन्दन हीन हृदय पर रखा था। पेट फूट गया था, जीभ निकल आई थी..... विजयी मृत्यु उनपको रौंदती निकल गई हो।'' यहां पर निषेधों में बसे हुए एक सहज जीवन की असहज घुटन को अभिव्यक्ति देकर समाज में विध्वाकी नियति का चित्रण करना ही उषा जी का मन्तव्य रहा है। शायद हमारे धर्म भीरू, समाज में विध्वा के जीवन का अन्त यही है और अगर बात आ जाए, विध्वा संबंधी कानूनों को तोड़कर, पर–पुरूष से संबंध बनाकर गर्भ ठहराने की, तो समाज, धर्म और परपंरा के नाम पर आत्महत्या का रास्ता इख्तियार करने को विवश करता है।

परिवार की संकीर्ण मानसिकताओं, अपेक्षा का वहन विध्वा को करना पड़ता है। परिवार में वह दया की पात्र हीन और अशुभ का प्रतीक मानी जाती है। नीलिमा हरमोहिनी की पुत्री है, बाल विध्वा है। हरमोहिनी का व्यवहहार नीलिमा के प्रति उपेक्षा से भरा हुआ है। वह उसके विध्वा होने का कारण उसके दुर्भाग्य को मानती है। इसी से विध्वा नीलिमा भरे–पूरे परिवार में स्वयं को अपेक्षित महसूस करती है।

हरमोहिनी अपनी विध्वा पुत्री नीलिमा और कुंवारी लड़की कविता दोनो के प्रति समान व्यवाहर नहीं करती। कविता को कुछ कार्य करने के लिए हरमोहिनी कभी नहीं कहती और नीलिमा को हर कार्य को धर्म स्वरूप करने की आज्ञा देती

है। नीलिमा की हृदय ग्रन्थि बार–बार स्वयं अपनी मां से मिलने वाली अपेक्षा के कारण तिरस्कार से निपीड़ित होने लगती है। उसके मन में प्रश्नों की बौछार होती है, वह प्रश्न करती है– ''क्या विध्वा केवल अश्रू की पात्र होती है? विध्वा होना क्या उसका अपराध है? उसी मां ने क्या मुझे जन्म नहीं दिया, जिसने कविता को दिया, फिर ऐसा पार्थक्य क्यों लज्जा निवारण के लिए विध्वा को वस्त्र का प्रयोजन नहीं, यदि है तो वस्त्र क्यों नहीं मिलते और कविता को क्यों मिलते हैं, मुंह के स्वाद के लिए यदि कविता एक पैसे का तेल भी पा सकती है तो उसके लिए उपवास का विघन क्यों है? आज के एकादशी उपवास के बाद कल उसे भोजन मिलेगा? केवल उबला साग, मुट्ठी भर चावल भी नहीं, किन्तु क्यों?'' उपेक्षापूर्ण व्यवहार से स्वाभाविक है, यही प्रश्न उठेंगे। विध्वा स्त्री इतनी निस्सहाय और विवश हो जाती है कि उसक भरा पूरा परिवार होने पर भी वह मानसिक है, यही प्रश्न उठेंगे। विध्वा स्त्री इतनी निस्सहाय और विवश हो जाती है कि उसक भरा पूरा परिवार होने पर भी वह मानसिक रूप से एकान्तिक जीवन व्यतीत करती है नीलिमा के अन्तःकरण में ये प्रश्न उठते हैं वह कहा जाएं, क्या करें? ''है मात्र विडम्बित जीवन की लाछन भरी टोकरी ओर हाहाकार, नहीं,–नहीं, खोई हुई अतीत की कोई ऐसी मनोस्मृति भी तो नहीं है। लेखिका उषा देवी मित्रा ने विध्वा समस्या का ज्वलंत चित्र प्रस्तुत करके सभी के अन्तकरण में वैचारिक दृष्टिकोण का समावेशन किया है। वैचारिक दृष्टिकोण से अभिप्राय यह नहीं है कि विचरों का सैलाब आए ओर थोड़ी सी उथल पुथल के बाद शान्त हो जाए, बल्कि यह है कि यह सैलाब सारे जन मानस को जागृत करती हुई निरंतर शाश्वत चेतना का भाव अन्तःकरण में समाविष्ट हो सके।

'पिया' उपन्यास में लेखिका उषा देवी मित्रा ने नारी शिक्षा के प्रति समाज के दृष्टिकोण को प्रकाशित किया। 'पिया' के रूप में उषा जी ने एक ऐसे पात्र को प्रकाशित किया जो शिक्षित है, स्वावलम्बी है। पिया के अनुसार शिक्षा वह माध्यम है, जो हमारी पहचान और हमारे अस्तित्व को सुदृढ़ बनाएगा। 'यह अधिकार और सम्मान प्राप्त करने की लड़ाई ही वास्तविक लड़ाई है इसे लड़े

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

बिना नारी स्वतंत्रता और मुक्ति की बात करना व्यर्थ है। इसी तरह कविता भी एक शिक्षित व तर्कशील नारी पात्र है।

लेखिका उषा जी ने 'पिया' उपन्यास में धर्म के पाखण्डी रूप को उद्घाटित किया। उषा जी के धर्म के नाम पर विध्वा से कराए जाने वाले कर्मकाण्डों का बखूबी पर्दाफाश किया है। विध्वा से निर्जला एकादशी का व्रत कराया जाता है और अन्य कई सारे कर्मकाण्ड करवाए जाते हैं, जिससे विध्वा का धर्म के नाम पर शोषण किया जाता है। जाति–पाति व भेदभाव को लेकर भी यदा कदा उपन्यास में प्रसंग मिलते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूचिः

1. म्हादेवी वर्मा, श्रृंख्ला की कड़िया, भारती भण्डार प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ. स. 2007, पृ. न. 22
2. उषा देवी मित्रा 'पिया' सरस्वती प्रैस बनारस, पृ. स. 1937
3. वही, पृ.न. 15
4. वही, पृ.न. 6
5. वही, पृ.न. 6
6. वही, पृ.न. 81
7. वही, पृ.न. 244
8. वही, पृ.न. 31
9. वही, पृ.न. 20